बाइबल टीचर

वर्ष 15 | मई 2018 | अंक 6

सम्पादकीय

क्या तुम से सच बोलने के कारण मैं तुम्हारा बैरी बन गया हूं?

प्रेरित पौलुस जब लोगों को बाइबल की सच्चाईयां बताता था तो लोग ध्यान से सुनते थे परन्तु कई लोग उनमें से ऐसे भी थे जो इन सच्चाईयों का विरोध करते थे, जैसे कि आज भी देखा जाता है कि मसीह की कलीसिया के लोग जब बाइबल में से लोगों को बताते हैं तो वे यह कहकर उनका विरोध करते हैं कि यह गलत डॉक्ट्रीन है। बाइबल हमें बताती है कि परमेश्वर का वचन सत्य है। (यूहन्ना 17:17)। और हम केवल सत्य का प्रचार करते हैं। प्रेरित पौलुस के द्वारा जो लोग मसीह के पास आये थे, उन्होंने सच्चे परमेश्वर तथा सत्य सुसमाचार को जाना था, परन्तु वे फिर से झूठी शिक्षाओं के पीछे जा रहे थे तथा उसने उन लोगों से कहा, "भला, तब तो तुम परमेश्वर को न जानकर उसके दास थे जो स्वभाव से परमेश्वर नहीं, पर अब जो तुमने परमेश्वर को पहचान लिया वरन परमेश्वर ने तुम को पहचाना, तो उन निर्बल और निकम्मी आदि शिक्षा की बातों की ओर क्यों फिरते हो, जिन के तुम दोबारा दास होना चाहते हो?" (गलतियों 4:8-9)।

प्रेरित कहता है, कि मैं तुमसे परमेश्वर के वचन की सच्चाई बांटना चाहता हू परन्तु तुम तो मुझे अपना बैरी समझने लगे हो। वह कहता है, "तो क्या तुम से सच बोलने के कारण मैं तुम्हारा बैरी बन गया हूं?" (गलतियों 4:16)। वह कहता है, "मुझे आश्चर्य होता है कि जिसने तुम्हें मसीह के अनुसार बुलाया उससे तुम इतनी जल्दी फिर कर और ही प्रकार के सुसमचार की ओर झुकने लगे। परन्तु वह दूसरा सुसमाचार है ही नहीं, पर बात यह है कि कितने ऐसे हैं, जो तुम्हें घबरा देते हैं, और मसीह के सुसमाचार को बिगाड़ना चाहते है। परन्तु यदि हम या स्वर्ग से कोई दूत भी उस सुसमाचार को छोड़ जो हमने तुम को सुनाया है कोई और सुसमाचार तुम्हें सुनाए तो श्रापित हो।"

आज बहुत से लोग गलतियों के लोगों की तरह ही सच्चाई से मुंह फेरकर मनुष्यों की शिक्षाओं पर मन लगा रहे हैं। आज बहुत से मसीही जो मसीह की कलीसिया के सदस्य सत्य से फिर अन्य शिक्षाओं पर मन लगा रहे हैं। प्रेरित पौलुस ने कहा था कि ऐसा समय आयेगा जब लोग विश्वास से बहक जाएंगे। (1 तिमु. 4:1-2)। मसीही प्रचारकों से प्रेरित पौलुस कहता है, "वचन का प्रचार कर समय

और असमय तैयार रह सब प्रकार की सहनशीलता और शिक्षा के साथ उलाहना दे और डांट और समझा (2 तिमु. 4:1-2)।

अपने समय में प्रेरित पौलुस जब प्रचार करता था लोग उसकी शिक्षा का विरोध करते थे और इसलिये उसे उन लोगों से कहना पड़ा कि, "तो क्या तुमसे सच बोलने के कारण मैं तुम्हारा बैरी बन गया हूं? आज हम साहित्य तथा टीवी के द्वारा लोगों को बाइबल की बहुत सी सच्चाईयां बोलते हैं तथा लोग इन सच्चाईयों को स्वीकार नहीं करना चाहते। क्या हम आपके बैरी बन जाते हैं जब हम आपको बताते हैं कि बाइबल अनुसार केवल एक देह है। (इफि. 4:4)। और यह देह यीशु की कलीसिया है जिसे उसने बनाया था (मत्ती 16:18)। इस कलीसिया का सिर केवल प्रभु यीशु है। (कुलु 1:18)। प्रभु की यह कलीसिया 33 ई. सन में यरूशलेम में बनी थी। इस कलीसिया में उद्धार पाये हुए लोग जिन्होंने बपतिस्मा लिया वे मिलाएं जाते हैं। (प्रेरितों 2:47)। यह बाइबल पर आधारित कितनी साधारण शिक्षा है। परन्तु फिर भी आज बहुत से प्रचारक जो हमें अपना बैरी समझते हैं लोगों को बेवकूफ बना रहे हैं। बाइबल हमें बड़ी सरलता से बताती है कि जो यीशु की देह, अर्थात् उसकी कलीसिया में नहीं है वे उद्धार नहीं पाएंगे।

हम लोगों को सिखाते हैं कि उद्धार पाने के लिये उन्हें क्या करना है? अधिकतर लोगों ने यह सुना है कि यीशु में विश्वास कर लो उद्धार हो जायेगा। परन्तु बाइबल ऐसा नहीं सिखाती। अधिकतर प्रचारक उद्धार के लिये दो बाइबल के विशेष पदों का इस्तेमाल करते हैं यूहन्ना 3:16 तथा प्रेरितों 16:31 जहां दरोगा से कहा गया था कि प्रभु में विश्वास कर तो, तू और तेरा घराना उद्धार पायेगा। मेरे जो बैरी हैं उन्हें यह बात समझ में नहीं आती कि उद्धार के विषय में यीशु ने और स्थानों पर भी बोला है। अर्थात् हमें विश्वास के पश्चात और कुछ भी करना है। बाइबल कहती है कि हमें उद्धार पाने के लिये वचन को सुनना है। क्योंकि विश्वास सुनने से और सुनना मसीह के वचन से होता है। (रोमियों 10:17)। अपने पापों से मन फिराना है (लूका 13:3), यीशु का अंगीकार करना है कि वह परमेश्वर का पुत्र है (मत्ती 10:32)। और फिर पापों की क्षमा के लिये बपतिस्मा लेना है। (प्रेरितों 2:38, मरकुस 16:16, तथा 1 पतरस 3:21)। यह बाइबल पर आधारित सत्य है, मेरे बैरी कहते है कि भाई ऐसे मत बोलो। वह कहते है आप तो बहुत सारी बातें बता रहे हो जबकि छोटी सी बात है कि यीशु में केवल विश्वास कर लो। मैं उनसे कहता हूं कि या तो यीशु की बात मान लो या फिर अपनी इच्छा पुरी कर लो।

अब एक और बात यह है कि हमें एक मसीही बनकर कैसा जीवन निर्वाह करना है। यदि मैं आपको इसके विषय में बताऊं तो क्या मैं आपका बैरी बन गया? कई लोग मसीही तो बन जाते हैं परन्तु मसीही जीवन को मजबूती से चला नहीं सकते। यीशु ने कहा था, "यदि कोई मेरे पीछे आना चाहे तो अपने आप से इंकार करे और प्रतिदिन अपना क्रूस उठाए हुए मेरे पीछे हो ले। (लूका 9:23)। कई लोग कठिनाईयां आने पर यीशु को छोड़कर भाग जाते हैं। यीशु ने यह भी कहा था कि हल के उपर हाथ रखकर पीछे मुड़कर मत देखना। (लूका 9:62)। मसीही बनने के

बाद हमारे जीवन में से वे सब बातें निकल जानी चाहिए जिन्हें पहले हम करते थे। हम अपनी इच्छानुसार नहीं चल सकते। हमें मृत्यु तक विश्वास योग्य बन कर रहना है। (प्रकाशित 2:10)। हमें अभक्ति और सांसारिक अभिलाषाओं से मन फिराना है तथा संयम और धर्म और भक्ति से जीवन बिताना है। (तीतुस 2:12)। अपने जीवनों में परमेश्वर के राज्य को प्रथम स्थान देना चाहिए। (मत्ती 6:33)। शरीर के गंदे कामों से दूर रहकर अपने अंदर अच्छे आत्मिक फल लाने हैं (गलतियों 5:19-26)। यदि हम परमेश्वर को प्रसन्न करना चाहते हैं तो हमें अपने शरीर को जीवता बलिदान प्रभु के लिये चढ़ाना है। (रोमियों 12:1-2)।

इन सच्चाईयों को हमें जानना चाहिए। प्रेरित पौलुस उनसे कहता है कि सच्चाई बताने के कारण क्या मैं आपका बैरी बन गया। जब हम आपको बाइबल से सत्य बताते हैं तो बुरा मत मानिये। उनकी जांच पड़ताल करिये जैसे कि बिरिया के लोगों ने किया था (प्रेरितों 17:11)। परमेश्वर का वचन सत्य है, इसलिये प्रत्येक शिक्षा को वचन से परखना चाहिए (यूहन्ना 17:17)।

क्या मैं आपका बैरी बन गया जब मैं आपको बताता हूं कि मसीही बनने के बाद कोई व्यक्ति अपने विश्वास से गिर सकता है, जैसा कि बहुत से प्रचारक सिखाते हैं कि एक बार मसीही बन गये तो आप कभी भी गिर नहीं सकते। यह एक गलत शिक्षा है। एक मसीही अपने विश्वास से गिर सकता है, इसलिये प्रत्येक मसीही को अपनी चौकसी करनी चाहिए। प्रेरित पौलुस ने कहा था, "इसलिये जो समझता है, कि मैं स्थिर हूं, वह चौकस रहे; कि कहीं गिर न पड़े" (1 कुरि. 10:12)।

फिर हम देखते हैं कि बाइबल हमें बताती है कि केवल दो स्थान हैं जहां आत्माएं अनन्तकाल तक रहेंगी। बहुत से सिखाते हैं कि हम पृथ्वी पर एक हजार वर्ष तक रहेंगे। जब यहां से हम चले जाएंगे उसके बाद न्याय होगा। (इब्रा. 9:27, 2 कुरि. 5:10)। न्याय के पश्चात धर्मी लोग स्वर्ग में प्रवेश करेंगे तथा दुष्ट लोग अनन्त काल का दण्ड भोगेंगे अर्थात नर्क में रहेंगे। कई लोग सोचते हैं स्वर्ग में हमारे लिये सीट रिजर्व है, यहां से जाने के बाद हमें हमारी सीट मिल जाएगी। मित्रो इस गलतफ़हमी में न रहे। न्याय के दिन आपको अपना हिसाब-किताब देना पड़ेगा। (रोमियों 14:12) यह सब बताने से क्या मैं आपका बैरी बन गया?

पाप का कारण

सनी डेविड

सचमुच में हम सब के लिये यह बड़े ही सौभाग्य की बात है कि हमारे पास अब यह अवसर है कि हम परमेश्वर के उस सामर्थ पूर्ण वचन का अध्ययन करेंगे जिसके द्वारा एक दिन हम सब का न्याय होगा। बहुतेरे लोग इस जगत में ऐसे है जो हमारी तरह सुन नहीं सकते, बहुतेरे पढ़ नहीं सकते। और बहुत से ऐसे भी हैं जो बीमारी या किसी प्रकार के

जोखिम के कारण इस सुन्दर अवसर का लाभ नहीं उठा सकते। मेरा ध्यान उन लोगों की तरफ भी जाता है जो कुछ दिन पहिले या कुछ ही घंटों पहिले हम सब की तरह इस पृथ्वी पर विद्यमान थे, परन्तु अब वे इस संसार में नहीं है। और जैसा जीवन उन्होंने हमारी इस पृथ्वी पर व्यतीत किया था, या जो भी निश्चय उन्होंने अपने जीवन में किया था उसी के अनुसार वे सब अब हमेशा के उस अनन्तकाल में रहेंगे जिसे परमेश्वर ने धर्मीयों और अधर्मियों के लिए ठहराया है। मित्रो, मैं आप को बताना चाहता हूं कि मनुष्य का जीवन इस पृथ्वी पर बड़ा ही मूल्यवान है। उसका मूल्य सोने-चांदी और जगत की मूल्यवान वस्तुओं से भी बहुत बड़ा है। इसलिये प्रभु यीशु ने एक बार कहा था कि, यदि कोई मनुष्य सारे जगत को भी प्राप्त कर ले परन्तु अन्त में स्वयं अपने ही प्राणों की हानि उठाएं तो उसे क्या लाभ होगा? या मनुष्य अपने प्राणों के बदले में क्या देगा?

पवित्र बाइबल कहती है, "तुम न तो संसार से और न संसार में की वस्तुओं से प्रेम रखो यदि कोई संसार से प्रेम रखता है तो उसमें परमेश्वर का प्रेम नहीं है। क्योंकि जो कुछ संसार में है, अर्थात शरीर की अभिलाषा और आंखों की अभिलाषा और जीविका का घमण्ड वह परमेश्वर की ओर से नहीं है परन्तु संसार ही की ओर से हैं और संसार और उसकी अभिलाषाएं दोनों मिटते जाते हैं, पर जो परमेश्वर की इच्छा पर चलता है वह सर्वदा बना रहेगा।" (1 यूहन्ना 2:15-17)।

इंसान की सबसे बड़ी कमजोरी उसकी अभिलाषा है। प्रत्येक पाप जो मनुष्य करता है उसका कारण उसके मन की अभिलाषा होती है। बाइबल कहती है कि प्रत्येक व्यक्ति अपनी ही अभिलाशा से खिंचकर और फंसकर परीक्षा में पड़ता है। और अभिलाषा गर्भवती होकर पाप को जन्म देती है और पाप का परिणाम मृत्यु होता हैं। (याकूब 1:13, 14)। जब इंसान किसी चीज की तरफ देखकर अपने मन में उसे पाने की लालसा करता है, तो उस समय वह इस बात पर ध्यान नहीं देता है कि उसका परिणाम क्या निकलेगा। उस समय तो वह सिर्फ उस मज़े या आनन्द को ही देखता है जो उस वस्तु से उसे प्राप्त होगा। प्रत्येक पाप का आरंभ मनुष्य के मन से होता है। क्योंकि मनुष्य के मन में ही सबसे पहिले अभिलाषा उत्पन्न होती है। इसी कारण बाइबल में एक जगह इस प्रकार लिखा हुआ है, कि "सब से अधिक अपने मन की रक्षा कर क्योंकि जीवन का मूल स्रोत वही है।" (नीतिवचन 4:23)। मनुष्य का मन, जिसके भीतर अभिलाषा उत्पन्न होती है, प्रत्येक पाप की चौकी है इसलिये जो मनुष्य अपने मन की रखवाली करता है वह अपने जीवन की रक्षा करता है। परन्तु वह काम इंसान के लिये वास्तव में बड़ा ही मुश्किल है। वह बड़े-बड़े हवाई जहाज और जल-पोत बना सकता है और उन्हें अपनी मर्जी के मुताबिक कहीं पर भी मोड़कर और चलाकर दूर-दूर तक ले जा सकता है और कहीं पर भी उन्हें ठहरा सकता है। वह बड़े-बड़े जानवरों को और हर प्रकार के पशु और पक्षियों को अपने वश में करके उनसे अपनी इच्छानुसार काम करवा सकता है। लेकिन वह स्वयं अपने ही मन को नहीं सभाल सकता। मन के बारे में उसका व्यवहार अक्सर उस छोटे से चूहे के समान बन जाता है जो चूहेदान में लगे छोटे से रोटी के टुकड़े की तरफ

आकृषित होकर उसकी तरफ बढ़ने लगता है और कुछ ही पल में वह उस चूहेदान में फंस जाता है। फिर वह उसके भीतर छटपटाता है, उससे मुक्त होने की कोशिश तो करता है, परन्तु नहीं हो पाता, और उसका अंजाम मौत होता है।

रुपया या पैसा मनुष्य के लिये संसार में एक ऐसा ही लालच है। रुपया हासिल करने के लिये लोग चोरी करते हैं, और डाके डालते हैं और लूटते है। रुपए के लाभ में पड़कर लोग झूठ बोलते हैं, और घूस लेते हैं। पैसे से आकृषित होकर लोग अपने ईमान को और अपनी इज्जत को और अपने आपको भी बेच डालते हैं। बाइबल में हम ऐसे अनेक लोगों के बारे में पढ़ते है जिन्होंने धन प्राप्त करने की अभिलाशा से खिंचकर अपने आपको मौत के मुंह में ढकेल दिया था। हम आकान के बारे में पढ़ते हैं, जिसने उस धन का लालच किया था जिसे लेने को परमेश्वर ने मना किया था, और फलस्वरूप उसे अपने परिवार समेत अपने प्राणों की हानि उठानी पड़ी थी। फिर हम हन्ना और सफ़ीरा के बारे में भी पढ़ते हैं जिन्होंने रुपयों का लालच करके पवित्रात्मा से झूठ बोला था, और परिणामस्वरूप उन्हें भारी दण्ड मिला था। और ऐसे ही हम यहूदा इस्करियोती के बारे में पढ़ते है जिसने चांदी के तीस सिक्कों के लालच में आकर अपने ही प्रभु को उसके दुश्मनों के हाथों बेच दिया था।

और आज भी पृथ्वी पर ऐसे लोगों की कोई कमी नहीं है जो अपने आप को, और अपने प्राणों को और अपनी आत्मा को धन के लालच में, आकर नाश कर रहे है। पवित्र बाइबल में एक जगह हम यूं पढ़ते हैं, कि "न हम जगत में कुछ लाए है और न कुछ ले जा सकते है। और यदि हमारे पास खाने और पहिनने को हो तो इन्हीं पर संतोष करना चाहिए। पर जो धनी होना चाहते है, वे ऐसी परीक्षा और फंदे और बहुतेरी व्यर्थ और हानिकारक लालसाओं में फंसते है, जो मनुष्यों को बिगाड़ देती है और विनाश के समुद्र में डूबा देती है। क्योंकि रुपए का लोभ सब प्रकार की बुराईयों की जड़ है, जिसे प्राप्त करने का प्रयत्न करते हुए कितनों ने विश्वास से भटककर अपने आप को नाना प्रकार के दुखों से छलनी बना लिया है।" (1 तीमुथियुस 6:7-10)।

यहाँ इस बात को समझना बड़ा ही जरूरी है कि स्वयं रुपये या पैसे में कोई बुराई नहीं है। पर बुराई वास्तव में रुपए के "लोभ" में है। लोभ, या अभिलाषा, या लालसा सब बुराईयों की जड़ है। लोभ में पड़कर और अभिलाषा से खींचकर मनुष्य पाप करता है। यह सच है, कि तरह-तरह की परीक्षाएं हमारे सामने आती है और प्रतिदिन हम परीक्षाओं से होकर गुजरते है। परीक्षा में पड़ना कोई पाप नहीं है। परन्तु परीक्षा के कारण लोभ, या लालसा या अभिलाषा में पड़कर गलत काम करना बुराई है। हम प्रभु यीशु मसीह के बारे में देखते हैं, कि उसके सामने भी कई बार बड़ी ही वास्तविक परीक्षाएं आई थी लेकिन उसने कभी भी कोई पाप नहीं किया था, क्योंकि उसके मन में कोई लोभ या अभिलाषा उत्पन्न नहीं हुई थी। जब उसने चालीस दिन और रात प्रार्थना करने में लगातार बिताए थे, तो उसके सामने बहुतेरी परीक्षाएं आई थी। लेकिन उसने एक भी पाप नहीं किया था। क्योंकि उसके मन में कोई लोभ या अभिलाषा उत्पन्न नहीं हुई थी। लेकिन उसने एक भी पाप नहीं किया था। भूखा

रहकर उसने कभी कोई पाप नहीं किया था। निर्धन रहकर उसने कभी कोई पाप नहीं किया था। उसके पास अद्‌भुत शक्ति थी परन्तु उसने अपनी शक्ति से किसी को भी कोई हानि नहीं पहुंचाई थी। उसने दुख सहा लेकिन अपने दुख देने वालों को नाश नहीं किया। परमेश्वर की मर्जी को पूरा करने के लिये उसने क्रूस के ऊपर दर्दनाक मौत को सह लिया था, और हर तरह के अपमान को अपने ऊपर उठा लिया था। यदि उसे अपने जीवन को बचाने की अभिलाषा होती, यदि उसे संसार में इज्जत और शोहरात प्राप्त करने की और बड़ा बनने की अभिलाशा होती, तो वह यह सब कुछ कर सकता था। लेकिन उसने ऐसा नहीं किया, क्योंकि वह जानता था कि परमेश्वर की इच्छा उसके बारे में क्या है।

बाइबल कहती है कि, "मसीह तुम्हारे लिये दुख उठाकर तुम्हें एक आदर्श दे गया है, कि तुम भी उसके चिन्ह पर चलो। न तो उसने कोई पाप किया, और न उसके मुंह से छल की कोई बात निकली। वह गाली सुनकर गाली नहीं देता था और दुख उठाकर किसी को भी धमकी नहीं देता था, पर अपने आपको सच्चे न्यायी के हाथ में सौंपता था। और वह आप ही हम सब के पापों को अपनी देह पर लिये हुए क्रूस पर चढ़ गया, जिससे हम पापों के लिये मर करके धार्मिकता के लिये जीवन बिताएं।" (1 पतरस 2:21-24)। सो यदि हम अपने जीवन में यीशु मसीह को अपना आदर्श बना लेंगे तो परीक्षाओं के होते हुए भी हम लोभ और अभिलाषा में नहीं पड़ेंगे। प्रभु यीशु के जीवन का उद्देश्य था परमेश्वर की मर्जी को पूरा करना और यही हमारे जीवनों का भी उद्देश्य बन जाएगा। परमेश्वर का पुत्र यीशु मसीह हमें एक नया जीवन और एक पवित्र मन दे देता हैं

वह हमारे सब पापों से हमारा उद्धार करता है, और हमें स्वर्ग में प्रवेश करने की आशा देता है।

सो यदि आप ने अपने जीवन को अभी तक भी पूरी तरह से उसे नहीं दिया है, तो मेरा आपसे आग्रह है कि आप उसमें अपने पूरे मन से विश्वास लाएं, और हर एक बुराई से अपना मन फिराएं, और अपने सब पापों की क्षमा के लिये उसके नाम से बपतिस्मा ले।

माता-पिता को मेरी सलाह

जे सी चोट

मैं उनको लिख रहा हूं जिनके पास छोटे बच्चे हैं। कई बार लोगों को सलाह अच्छी नहीं लगती। कई लोग बुरा मान जाते हैं। जवान माता-पिता इन बातों पर कोई ध्यान नहीं देते। कई बार ऐसा लगता हे कि माता-पिता मानसिक रूप से सलाह लेने के लिये तैयार नहीं हैं। फिर भी मैं प्रयत्न कर रहा हूं कि शायद आप मेरी सलाह को मानेंगे। आप इन बातों के विषय में गम्भीरता से विचार करेंगे। मैं इन बातों को इसलिये भी लिख रहा हूं क्योंकि मेरे

अपने भी बच्चे हैं, तथा पोते पोतियां भी हैं। जो भी बातें मैं आपको बताऊंगा यह सब बाइबल पर आधारित है।

सबसे पहली बात जो मैं कहना चाहूंगा कि अपने बच्चों के लिये आप परमेश्वर को धन्यवाद दीजिये। यह बच्चे आपके लिये धन के समान हैं। आपको यह समझना चाहिए कि परमेश्वर ने आपको जो बच्चे दिये है उनकी आपके ऊपर एक बहुत बड़ी जिम्मेवारी है। आपको इन बच्चों से प्रेम करना है तथा इनकी देखभाल करनी है। बच्चों को आप दोनों की आवश्यकता है। मैं जानता हूं आप मुझसे इस बात में सहमत होंगे।

बाइबल कहती है कि शिक्षा देते हुए और चेतावनी देते हुए उनका पालन-पोषण करो। (इफिसियों 6:4)। एक मसीही के लिये ऐसा करना बड़ा आवश्यक है। कई बार ऐसा करने में अड़चने तो आती है जब दोनों में से एक मसीही नहीं है। अकलमंदी की बात यह है कि आपको अपने बच्चों को आत्मिक शिक्षा देनी है। और इस कार्य को करने के लिये आपको प्रभु की सहायता की आवश्यकता है। आपको मिलकर यह सोचना है कि हम पूरा परिवार प्रत्येक रविवार को समय से अराधना में जायेंगे ताकि बच्चे संडे स्कूल में भाग ले सके।

यदि आपके परिवार में कुछ लोग मसीह की कलीसिया में नहीं है तो उन्हें भी सिखाइए और उन्हें चर्च की सभाओं में लाइये। कई बार कई परिवारों में सब मसीही होते हैं यानि सब कलीसिया के सदस्य होते हैं। परन्तु सारे अराधना में नहीं आते और यह बच्चों के लिये एक अनुचित उदाहरण होता हैं हम अपने बच्चों को प्रतिदिन स्कूल भेजते हैं परन्तु जब संडे स्कूल की बात होती है तो हम कोई ध्यान नहीं देते। आप चाहते हैं कि आपके बच्चों को अच्छी शिक्षा मिले और वे बड़े होकर अच्छा नाम कमाएं परन्तु बाइबल की शिक्षा में हम क्यों पीछे रह जाते हैं?

यदि हमने अपने बच्चों को शुरू में बाइबल की बातें नहीं सिखाई और उन्हें सण्डे स्कूल से दूर रखा, जब वे बड़े हो जाते हैं तब उनका शौक बाइबल की बातों में नहीं आता। कई माता-पिता बाद में बहुत पछताते हैं कि हमने अपने बच्चों को बाइबल भी शिक्षा शिक्षा नहीं दी। कई बच्चे जब बड़े हो जाते हैं तब उनका अराधना में जाने का मन नहीं करता। यह एक बड़े दुख की बात होती है कि आपके बच्चे बड़े होकर आत्मिक बातों में शौक नहीं रखते। और यह बात कई बार हमारे कारण ही होती है। क्योंकि हमने बच्चों को यह शिक्षा नहीं दी कि अपने जीवन में पहला दर्जा परमेश्वर को दे।

मेरी सलाह आपको यह होगी कि अपने घर में बच्चों को ऐसा माहोल दें कि बच्चों का शौक बाइबल की बातों में बढ़े। अपने बच्चों को सिखाएं कि परिवार में उन्हें एक दूसरे का आदर करना चाहिए। अपने परिवारों में भी बाइबल अध्ययन करें। अपने घर में मसीहीयत का अच्छा उदाहरण रखें। अपने बच्चों के सामने कभी भी कलीसिया के अगुवों की बुराई न करें। बच्चों के सामने एक अच्छा मसीही उदाहरण रखें।

यदि आप दोनों मसीही हैं, तो आपको प्रतिदिन अच्छे मसीही बनकर रहना

चाहिए। अपनी मसीहीयत को केवल सण्डे तक सीमित न रखें। आपके मित्रो के साथ आपका व्यवाहार कैसा है? मसीही जीवन आपके घरों में तथा कलीसिया में दिखाई देना चाहिए। यीशु मसीह आपके जीवनों में दिखाई देना चाहिए। यह मैं इसलिये कह रहा हूं क्योंकि आपके बच्चे आपके जीवन को देखते हैं।

अपने बच्चों का ध्यान रखिये। उन्हें बाइबल की शिक्षा दीजिये। एक दिन जब वे बड़े होंगे। उनका विवाह होगा तब वे याद करेंगे कि हमारे माता-पिता कितने अच्छे है कि उनहोंने हमें अच्छी मसीही बातें सिखाई। आप क्या मेरी सलाह से सहमत हैं? क्या आप मानते हैं कि जो मैंने बोला वह सही है?

मनुष्य के पाप में गिरने के जवाब में परमेश्वर के नियम

बैटी बर्टन चोट

सृष्टि के आरंभ से ही परमेश्वर का इरादा पुरुष को अपने परिवार का प्रमुख बनाने का था। फिर भी स्त्री की अगुआई में अपराध होने के कारण नई पाबंधियां और नियम बना दिए गए।

हव्वा और आदम द्वारा निषेधित फल खाने के बाद, उन्हें समझ में आया कि उन्होंने पाप किया है और पहली बार उन्हें परमेश्वर के भय का अहसास हुआ।

"तब यहोवा परमेश्वर, जो दिन के ठंडे समय वाटिका में फिरता था, उसका शब्द उनको सुनाई दिया। तब आदम और उसकी पत्नी वाटिका के वृक्षों के बीच यहोवा से छिप गए। तब यहोवा परमेश्वर ने पुकार कर आदम से पूछा, 'तू कहाँ है?

उसने कहा, 'मैं तेरा शब्द बारी में सुनकर डर गया क्योंकि मैं नंगा था; इसलिये छिप गया।'

उसने कहा, 'किस ने तुझे चिताया कि तू नंगा है? जिस वृक्ष का फल खाने को मैं ने तुझे मना किया था, क्या तू ने उसका फल खाया है? "(उत्पत्ति 3:8-13क)।

परीक्षा की इस दुखद कहानी में हव्वा ने परिवार का नेतृत्व अपने हाथ में ले लिया और आदम ने उसे ऐसा करने दिया। पर जब परमेश्वर सामने आया तो क्या उसने उन बदलावों को मान लिया, जो उन्होंने अपनी भूमिकाओं में कर लिए थे?

नहीं! परमेश्वर ने आदम को बुलाया। क्या परमेश्वर को पता था कि पाप हुआ है? और क्या उसे पता था कि अपराध करने में अगुआई किसने की थी? बेशक उसे मालूम था, क्योंकि परमेश्वर तो अन्तर्यामी है, वह सब कुछ जानता है। परन्तु परमेश्वर ने परिवार के लिए नेतृत्व की इस जिम्मेदारी को देते हुए आदम को इसका मुखिया बनाया था और जो कुछ हुआ था, उसका उत्तर देने के लिए उसने आदम को ही बुलाया। परमेश्वर के ठहराए क्रम को नकारने की इस पहली घटना से हमें यह सीखने की आवश्यकता है कि परमेश्वर अपने सिस्टम को न बदलता है और न बदलेगा, मनुष्य चाहे जो कर ले।

वास्तव में रोमियों 5 अध्याय में हम पढ़ते है, "इसलिए जैसा एक मनुष्य के द्वारा

पाप जगत में आया, और पाप के द्वारा मृत्यु आई...." (आयत 12), "....क्योंकि जब एक मनुष्य के अपराध से बहुत लोग मरे...." (आयत 15), "क्योंकि जब एक मनुष्य के अपराध के कारण मृत्यु ने उस एक ही के द्वारा राज किया,..." (आयत 17)। परमेश्वर ने संयोग से या लापरवाही से "स्त्री" के बजाय "पुरुष" का शब्द इस्तेमाल नहीं किया। पवित्र शास्त्र के इस अध्याय में तीन कथनों का बार-बार कहा जाना हमें बता रहा है कि निषेधित फल को खाने में अगुआई चाहे हव्वा ने ही की थी पर पहले आदम के परिवार में लीडरशिप के अपने अधिकार का इस्तेमाल करने में नाकाम रहने पर ही पाप संसार में आया। परमेश्वर के रिकॉर्ड में मनुष्यजाति पर पाप और उसके परिणाम में मृत्यु का आना स्त्री के द्वारा नहीं बल्कि पुरुष के द्वारा हुआ है।

पहला अपराध होने पर सर्प को, स्त्री को, और पुरुष को उनके पाप के कारण नये नियम और दण्ड बताए गए थे, पर मनुष्यजाति के अधिक संवेदनशील और भावनात्मक भाग के रूप में स्त्री को इन क्षेत्रें में बड़ा बोझ उठाना था। बच्चे जनने की पीड़ा की तरह, उसके बच्चों के गर्भधारण की पीड़ा को बढ़ा दिया गया। इसके अलावा उसे अपने पति के अधिकार के और भी अधीन कर दिया गया, जिसमें उसकी "लालसा अपने पति की ओर" होनी थी और उसने उस पर "प्रभुता" करनी थी।

1 पतरस 3:1-7 में हम उन पत्नियों और पतियों को जो मसीही हैं, दिए गए निर्देशों को पढ़ते हैं: "हे पत्नियो, तुम भी अपने-अपने पति के अधीन रहो। ....तुम्हारा शृंगार दिखावटी न हो, अर्थात बाल गूंथने, और सोने के गहने, या भांति-भांति के कपड़े पहिनना। वरन तुम्हारा छिपा हुआ और गुप्त मनुष्यत्व, नम्रता और मन की दीनता की अविनाशी सजावट से सुसज्जित रहे, क्योंकि परमेश्वर की दृष्टि में इसका मूल्य बड़ा है। और पूर्वकाल में पवित्र स्त्रियां भी, जो परमेश्वर पर आशा रखती थी, अपने आपको इसी रीति से संवारती और अपने-अपने पति के अधीन रहती थी। जैसे सारा अब्राहम की आशा में रहती और उसे स्वामी कहती थी। इसी प्रकार तुम भी यदि भलाई करो, और किसी प्रकार के भय से भयभीत न हो, तो उसकी बेटियां ठहरोगी।"

"वेसे ही हे पतियो, तुम भी बुद्धिमानी से पत्नियों के साथ जीवन निर्वाह करो और स्त्री को निर्बल पात्र जानकर उसका आदर करो, यह समझकर कि हम दोनों जीवन के वरदान के वारिस हैं, जिससे तुम्हारी प्रार्थनाएं रूक न जाएं।"

ये आयतें हमें बताती है कि अधिकार का परमेश्वर का क्रम जिसमें पुरुष को घर का मुखिया और अपने परिवार की भलाई के लिए जिम्मेदार अगुआ बनाया गया है, मसीह के आने और उसकी नई व्यवस्था के आरंभ होने के कारण खत्म नहीं हो गया। मसीही स्त्रियों को भी, अपने-अपने पतियों के अधीन रहने को कहा गया है, तथा पतियों को प्रेम और समझदारी से उनकी अगुआई करने की आज्ञा दी गई है।

पर कोई पूछेगा, "मान लो कि कोई स्त्री अपने पति से अधिक समझदार है, या मान लो कि दोनों में से वह बेहतर अगुआई कर सकती है। तो क्या इन दोनों मामलों में उसे जिम्मेदारी नहीं लेनी चाहिए?"

नहीं! परमेश्वर ने कहीं पर भी क्रम या तरतीब के अपने ठहराए प्रबंध को

दरकिनार करने का अधिकार किसी पुरुष या स्त्री को नहीं दिया है।

परिवार के लिए अधिकार परमेश्वर के ठहराए क्रम को ध्यान में रखते हुए पुरुष हो या स्त्री, दोनों को जीवन-साथी चुनने में बहुत सावधानी बरतनी चाहिए। यदि बलवान स्त्री का विवाह निर्बल पुरुष के साथ हो जाता है तो उसकी जिम्मेदारी का एक भाग उसकी जिम्मेदारियों को संभालकर उसे और निर्बल करने के बजाय लीडरशिप की भूमिका में अपने पति को प्रोत्साहित करने के लिए उसकी "सहायक", "जो उससे मेल खाए" बनने का हैं

इन आयतों में प्रयुक्त शब्दावली से पता चलता है कि अधिकार की यह बात केवल पति और पत्नी पर छोड़ दिया जाने वाला फैसला नहीं है। इसके विपरीत हमें याद दिलाया गया है कि:

- स्त्री के कोमल और करुणामय हृदय का "परमेश्वर की दृष्टि में मूल्य बड़ा है।"
- पुरुष और स्त्री के बीच सही सम्बंध तय होगा ताकि उनकी "प्रार्थना रूक न जाएं।"
- पति/पत्नी का संबंध केवल उनके अपने निर्णय और विचार पर आधारित उनके बीच की बात नहीं है। बल्कि परमेश्वर के साथ उनका आपसी संबंध उनके उसकी आज्ञा मानने से प्रभावित होता है।
- किसी भी मामले में हम परमेश्वर की व्यवस्था को दरकिनार करके उसे प्रसन्न नहीं कर सकते।

अधिकार के इस क्रम की, जिसे परमेश्वर ने ठहराया है, अंतिम और स्पष्ट बात 1 कुरिन्थियों 11:3 में मिलती है, जहाँ पौलुस ने कहा था, "सो मैं चाहता हूं, कि तुम यह जान लो, कि हर एक पुरुष का सिर मसीह है, और स्त्री का सिर पुरुष है: और मसीह का सिर परमेश्वर है।"

आत्मिकता के तीन शत्रु

डॉ. एफ.आर. साहू (छ.ग.)

1. शारीरिकता: "पर मैं कहता हूं आत्मा के अनुसार चलो तो तुम शरीर की लालसा किसी रीति से पूरी ना करोगे, क्योंकि शरीर आत्मा के विरोध में, और आत्मा शरीर के विरोध में लालसा करता है और यह एक दूसरे के विरोधी हैं।" (गलातियों 5:16-17)।

मसीही लोग आत्मिक जीवन में कई बार शारीरिक लालसाओं को पूरा करने के यत्न में बहुत सी परीक्षाओं में पड़ जाते हैं। इसी कारण वे जीवन और शांति से वंचित हो जाते हैं। जबकि जीवन और शांति की अनुभूति केवल आत्मिक बातों में ही प्राप्त होती है। जैसे लिखा है- "शरीर पर मन लगाना तो मृत्यु है, परन्तु आत्मा पर मन लगाना जीवन और शांति है।" (रोमियों 8:6)।

इस विषय में प्रेरित पौलुस विशेष चेतावनी देते हुए लिखता है "इसलिए हे भाइयो हम शरीर के कर्जदार नहीं, कि शरीर के अनुसार दिन काटें, क्योंकि यदि तुम शरीर के अनुसार दिन काटोगे तो मरोगे, यदि आत्मा से देह की क्रियाओं को मारोगे तो जीवित रहोगे?" (रोमि. 8:12-13)। परन्तु शारीरिक मनुष्य आत्मिक बातों को ग्रहण नहीं करता, क्योंकि उसकी दृष्टि में यह मूर्खतापूर्ण बातें हैं (1 कुरि. 2:14)।

शारीरिक मनुष्य: शारीरिक मनुष्य का स्वाभाविक विवरण कुछ इस प्रकार से हो सकता है- शारीरिक मनुष्य अच्छा काम करने की इच्छा तो करता पर वह करता नहीं है, और जब वह भलाई करने की इच्छा करता है तो बुराई उसके पास आती है। (रोमि. 7:15, 18, 19)। शारीरिक मनुष्य भीतरी मनुष्यत्व अर्थात् (मन) से तो वह ईश्वरी बातों से बहुत प्रसन्न रहता है, परन्तु व्यवहारिक जीवन में वह इन विषयों में असफल होता है (रोमि. 7:21-24)। क्योंकि उसका पूरा ध्यान भोग-विलास में लगा रहता है और वह शारीरिक की कामनाओं को पूरा करने में लगा रहता है। इस प्रकार वह अपना अनमोल समय, और जीवन व्यर्थ में गवां देता है। (रोमि. 6:8)। अत: वे पापी स्वभाव के कारण अधर्मी होते हुए भी अपने आप को धर्मी समझ बैठता है, और धर्म रूपी पर्दे के पीछे कुछ औपचारिकताओं को निभाकर सत्य को नहीं मानने वरन अधर्म को मानने के बावजूद भी वाद विवाद करते रहता है। (रोमि. 2:8-9)।

इस तरह शारीरिक मनुष्य यह नहीं जानता कि उसके अधर्म के कामों ने उसे उसके सृष्टिकर्ता से अलग कर दिया है, एवं उसके पापों के कारण उसकी एक भी विनती और प्रार्थनाएं नहीं सुनी जाती (यशा. 59:1-2)। इसलिए यह ध्यान रहे कि मसीह में जो आपको स्वतंत्रता मिली है, वह शारीरिक कामों के लिए अवसर न बन जाएं? (गला. 5:13)।

प्रिय मित्रो, कोई आत्मिक जन अपनी शारीरिक कामनाओं को दमन करने में असफल हो जाए तो वह अवश्य ही उनकी अपनी शारीरिक कामनाएं और बुरी अभिलाषाएं उनके पतन के लिए द्योतक बन जाएगा और इसी तरह की शारीरिकताएं औरों के सामने उसे निकम्मा ठहरा सकती है? (1 कुरि. 9:27)।

और जैसा लिखा है- "इसलिए अपने उन अंगों को मार डालो जो पृथ्वी पर है, अर्थात् व्यभिचार, अशुद्धता, दुष्कामना, बुरी लालसा और लोभ जो मूर्ति पूजा के बराबर है।" (कुलि. 3:5)। इससे पहले कि शारीरिक कामनाएं प्रबल हो, मन पर नियंत्रण रखना जरूरी है, मन की रक्षा करना जरूरी है, क्योंकि मन ही तो जीवन का मूल स्रोत है? (नीतिवचन 4:23)। वचन हमें चिताता है कि हम धोखा न खाए और न परमेश्वर को ठट्ठों में उड़ाएं। क्योंकि मनुष्य जो कुछ बोता है वही काटेगा (गलातियों 6:7-8)।

अंत में हम भी आपसे आग्रह करते हुए पौलुस की भाषा में निवेदन करते हैं- "इसलिए हे भाइयो मैं तुमसे परमेश्वर की दया स्मरण दिला कर विनती करता हूं कि अपने शरीरों को जीवित और पवित्र और परमेश्वर का भावता हुआ बलिदान करके चढ़ाओ, यही तुम्हारी आत्मिक सेवा है। संसार के सदृश न बनो परन्तु तुम्हारे मन के नए हो जाने से तुम्हारा चाल-चलन भी बदलता जाएं।" (रोमि. 12:1-2)।

2. सांसारिकता: संसारिकता के विषय में पहले हम देखना चाहेंगे कि सांसारिकता क्या है? सांसारिकता का सही अर्थ है कि जब कोई व्यक्ति संसार की बुरी वस्तुओं से जुड़ जाता है। हम देखते हैं कि यीशु जब इस संसार में आया तो क्या वह संसारिक था? यीशु संसार में था पर वह संसारिक नहीं था। यीशु ने इस संसार में जन्म लिया जैसे सब लेते हैं और जैसे संसार में सब रहते हैं वैसे ही यीशु भी इस संसार में रहा, पर संसार में रहकर भी उसने कभी कोई गलत कार्य नहीं किया।

उन दिनों में अपने समय के लोगों से यीशु ने कहा था "तुम नीचे के हो मैं ऊपर का हूं, तुम संसार के हो, मैं संसार का नहीं" (यूहन्ना 8:23)। और उसने अपने पिता (परमेश्वर) से बात करते हुए, यह भी कहा था "मैंने तेरा वचन उन्हें पहुंचा दिया है, संसार ने उनसे बैर किया, क्योंकि जैसा मैं संसार का नहीं वैसे ही वे भी संसार के नहीं।" (यूहन्ना 17:14)। जब यीशु को उसके शत्रुओं ने पकड़ लिया और उस पर झूठा मुकद्मा चलाया तो उसने अपने पकड़ने वालों से भी कहा - "मेरा राज्य इस जगत का नहीं, यदि मेरा राज्य इस जगत का होता तो मेरे सेवक लड़ते कि मैं यहूदियों के हाथ सौंपा न जाता, परन्तु मेरा राज्य यहाँ का नहीं।" (यूहन्ना 18:36)।

यीशु तो संसार का नहीं था क्या उसके चेले संसार के थे? एक बार यीशु ने अपने चेलों के विषय में भी कहा था "यदि तुम संसार के होते तो संसार अपनों से प्रेम रखता; परन्तु इस कारण कि तुम संसार के नहीं वरन मैंने तुम्हें संसार में से चुन लिया है, इसीलिए संसार तुम से बैर रखता है।" (यूहन्ना 15:19)। मसीहियों के विषय में क्या कहा जा सकता है? जो बात चेलों के विशय में सही है वही बातें मसीहियों के विषय में भी सही है। अर्थात् मसीह संसार का नहीं तो मसीही भी संसार के नहीं।

आज हम सब मसीही आत्मिक जन इस संसार में है और इस पृथ्वी पर संसार के लोगों के साथ रहते हैं, पर संसार के नहीं है और न संसारिक लोगों के बुरे कामों में भाग लेते हैं। हमारा पूरा प्रयास रहता है कि हम प्रत्येक प्रकार की बुरी बातों से दूर रहें। हम जब संसार में रहते हैं तो खाना खाते हैं पानी पीते है, काम करते हैं, आराम करते हैं जैसे सब लोग जीवन निर्वाह करते हैं, हम भी वैसा ही करते हैं। परन्तु यदि कोई मसीही आत्मिकजन हत्या करे और चोरी करे और नशीले पदार्थों का सेवन करने लगे तो उसकी इस तरह की संसारिकता उसके आत्मिक जीवन के लिए पतन का एक बहुत बड़ा द्योतक है। इसलिए मित्रो आत्मिक जीवन में मजबूत बने रहने के लिए संसारिकताओं का त्याग करना बहुत आवश्यक है। (कुलु. 2:20-22)।

और बहुत सी संसारिक परम्पराएं हैं उन से भी सावधान रहने की आवश्यकता है, क्योंकि कुछ परम्पराएं आत्मिकजन को व्यर्थ धोखे के द्वारा अपना अहेर बना सकती है। (कुलु. 2:8)।

इसके अलावा एक बात और है जिसको समझना और भी अत्यंत आवश्यक है और वह है संसार की बुरी अभिलाषाएं। सच तो यह है कि जो परमेश्वर की ओर से नहीं उन वस्तुओं से अधिक लगाव रखना भी व्यर्थ है (1 यूहन्ना 2:15-17)।

अर्थात् एक आत्मिकजन के लिये परमेश्वर से अधिक संसार को मित्र बनाना परमेश्वर से बैर करना है। (याकूब 4:4)।

मसीही उत्तरदायित्व को कैसे निभाना है इस विषय में आग्रह करते हुए पतरस ने कहा "हे प्रियो मैं तुम से बिनती करता हूं अपने आप को परदेशी और यात्री जानकर उन सांसारिक अभिलाषाओं से जो आत्मा से युद्ध करती है, बचे रहो। अन्यजातियों में तुम्हारा चाल-चलन भला हो; ताकि जिन-जिन बातों में वे तुम्हें कुकर्मी जानकर बदनाम करते हैं वे तुम्हारे भले कामों को देखकर उन्हीं के कारण कृपा दृष्टि के दिन परमेश्वर की महिमा करे।" (1 पत. 2:11,12)।

3. शैतान: शैतान तो इस खोज में रहता है कि किस को फाड़ खाए? (1 पत. 5:8)। क्या मसीही आत्मिकजन को शैतान से डरना चाहिए? बाइबल हमें बताती है कि शैतान से डरने की बिल्कुल जरूरत नहीं है बल्कि उसका सामना करने की जरूरत है? (याकूब 4:7)।

शैतान के छल-कपट से सावधान रहने की जरूरत है और शैतान की युक्तियों के सामने खड़े रहने की जरूरत है। प्रभु में और उसकी शक्ति के प्रभाव में बलवंत होने की जरूरत है।

क्योंकि शैतान की युक्ति हमेशा परीक्षा में डालने के लिये होती है और हमारे विश्वास को कमजोर करने के लिये हो सकती है। इसलिये इस अभिप्राय को पूरा करने के लिये परमेश्वर के सारे कवच को धारण करने की जरूरत है। (इफि. 6:10, 11)।

और शैतान के द्वारा बहुत से आत्मिक दोषारोपण का मुकाबला करने की शक्ति केवल परमेश्वर के वचन में है, क्योंकि परमेश्वर का वचन सब कुछ कर सकता है, आत्मा ही प्रतिरक्षात्मक हेतु महत्वपूर्ण हथियार है अर्थात् परमेश्वर का वचन (इफि. 6:17)।

शैतान केवल संसारिक या शारीरिक व्यक्ति का विरोध नहीं करता बल्कि वह आत्मिक व्यक्ति का विरोध अधिक करता है। अर्थात् जब हम संसारिकता से मन फिरा कर मसीह के साथ परमेश्वर की संतान हो जाते हैं तब शैतान इस सच्चाई का विरोध करने के लिये नाना प्रकार के हथकण्डे अपनाता रहता है। इसीलिये हमें हमेशा शैतान का विरोध करना है।

हम देखते हैं कि यीशु जब इस संसार में था वह सब बातों में हमारी नाईं परखा तो गया, तौभी निष्पाप निकला (इब्रा. 4:15) पर जैसे ही उसने पिता (परमेश्वर) की इच्छा को पूरा किया तो इस बात की पुष्टि हुई की वह परमेश्वर का प्रिय पुत्र है, (मत्ती 3:16-17)। और राज्य के लिए उसका अभिषेक किया गया और परमेश्वर की आत्मा से वह परिपूर्ण हुआ तब परखने वाले इबलीस (शैतान) ने यीशु की कैसे परीक्षा की। लेकिन यीशु ने उस समय किसी भी भौतिक हथियारों का इस्तेमाल नहीं किया परन्तु परमेश्वर के सामर्थी वचनों के द्वारा शैतान को निरूत्तर किया और शैतान को उसके सामने से हटना पड़ा और वह उसके पास से चला गया। (मत्ती 4:3,7-11)।

यीशु इसलिये आया कि मनुष्य के जीवन से शैतान के सारे कार्यों को नष्ट करे (1 यू. 3:8)। इसलिये यदि हमें किसी का भय हो तो केवल उसी का जिसके हाथों

में शरीर और आत्मा दोनों को नष्ट करने का अधिकार है अर्थात् हमें परमेश्वर का भय मानना है (मत्ती 10:28)।

हमें मालूम होना चाहिए कि अब जीवन और मृत्यु पर केवल मसीह यीशु का अधिकार है। इसलिए मसीही आत्मिक जन को किसी बात का खौफ खाने की आवश्यकता नहीं है, और न किसी का भय मानने की जरूरत है। क्योंकि परमेश्वर ने मसीह यीशु में हमें जयवंत जीवन से परिपूर्ण किया है। भय मानें तो केवल परमेश्वर का (सभोपदेशक 12:13)।

विश्वास से या विचार से?

फ्रैंक चैसर

आप विश्वास से चलते हैं या विचारों यानी भावनाओं से? आपके इस प्रश्न का उत्तर देने के ढंग से यह तय होगा कि आप अनन्तकाल में कहाँ रहेंगे। आपको कैसे मालूम कि आपका उद्धार हो चुका है? बहुत से लोगों का इस प्रश्न के लिए उत्तर होता है। "क्योंकि मेरा मन कहता है।" कितना खतरनाक है कि उद्धार जैसी महत्वपूर्ण बात केवल भावना पर आधारित है। जीवन के अन्य किसी भी क्षेत्र में किसी विशेष बात या कार्य के सही या गलत होने को ठहराने के लिए भावना या विचार को आधार नहीं बनाया जाता।

केक बनाने के लिए "भावना" नहीं चाहिए होती। इसके बजाय केक बनाने के लिए आवश्यक सामग्री, उसे बनाने का तरीका और यह पता होना आवश्यक है कि उसे कितने तापमान में बनाया जाए। इसके अलावा सामग्री बताई जाती है कि उसे बनाने के लिए क्या-क्या डाला जाए और कितनी मात्र में डाला जाए और उसे बनाने के लिए कितना तापमान रखा जाए। मकान बनाने वाला कोई कारीगर कभी "भावना" से मकान बनाने का प्रयास नहीं करेगा। इसके उलट पहले वह नक्शा देखेगा ताकि उसे पता चल सके कि मकान में कहाँ, क्या, और कितने साइज का बनाना है। बाहर घूमने जाने के लिए कोई "भावना" से काम नहीं लेगा। इसके बजाय नक्शा देखा जाएगा कि कहाँ-कहाँ जाना है और किस रास्ते से जाना है, कब दायें मुड़ना है या कब बाएं।

इसके अलावा केक को बनाने के लिए यह बताने के लिए ऐसी चीजें इस्तेमाल न की जाएं, कोई सामग्री के काम न करने के आधार पर पांच और चीजें डालने के लिए बहस नहीं करेगा। नक्शे से पता चलता है कि तीन बैडरूम होने चाहिए, यदि नक्शे में तीन बैडरूप बताए गए है तो सयाना ठेकेदार निश्चय ही चार बैडरूम बनाकर अपने काम को यह कहकर सही ठहराने का प्रयास नहीं कर सकता कि "नक्शे में तो नहीं कहा गया कि यह मत बनाना।" कहीं जाने की इच्छा रखने वाला यात्री नक्शे में यह लिखा न होने पर कि "इधर मत जाना...." किसी भी दिशा में जाने की छूट में अपने विचार नहीं दे सकता।

बहुत से लोगों को धर्म में यही तर्क लागू करना अच्छा नहीं लगता। हमें "रूप

को देखकर नहीं, विश्वास से" चलने की आज्ञा है (2 कुरिन्थियों 5:7)। विश्वास केवल परमेश्वर के वचन से मिलता है (रोमियों 10:17)। इस कारण विश्वास से चलने के लिए परमेश्वर के वचन की शिक्षाओं के अनुसार चलना आवश्यक है। यदि कोई कार्य परमेश्वर के वचन के द्वारा अधिकृत नहीं है तो वह "विश्वास से" किया हुआ कार्य नहीं होगा।

केवल यह "लगता" होने पर कि उसका उद्धार हो गया है, किसी को पता नहीं चल सकता कि उसका उद्धार हो सकता है। केवल इस कारण कि उसे "लगता है" कि परमेश्वर को स्वीकार्य है उसे पता नहीं चल सकता कि उसकी आराधना परमेश्वर को स्वीकार्य है। न ही केवल भावना के आधार पर यह पता लगाना संभव है कि कोई स्वर्ग के मार्ग पर है या नहीं। परमेश्वर के वचन को जो कि हमारे लिए नक्शे का काम करता है, देखा जाना आवश्यक है। जिस प्रकार सांसारिक तम्बू बनाने के लिए मूसा ने परमेश्वर के दिए नमूने को बड़ी चौकसी से माना था (निर्गमन 25:40), वैसे ही हमें भी अपने आत्मिक जीवनों के निर्माण के लिए परमेश्वर के ईश्वरीय नमूनों को मानने में चौकसी करनी आवश्यक है।

हमें यह समझ होनी आवश्यक है कि भावनाएं अविश्वसनीय होती है यानी वे भरोसे के योग्य नहीं होती। युद्ध के बाद कई बार स्त्रियों ने यह "सोचकर" कि उनके पतियों की मृत्यु हो गई होगी, दूसरा विवाह कर लिया, जबकि कई महीनों या सालों के बाद पता चला कि वे मरे नहीं थे। सच है कि भावनाएं भ्रमित करने वाली और अविश्वसनीय होती है। जो मानवीय दृष्टिकोण से सही लगता है, हो सकता है कि वह गलत हो। "ऐसा मार्ग है, जो मनुष्य को ठीक देख पड़ता है, परन्तु उसके अंत में मृत्यु ही मिलती है" (नीतिवचन 14:12)।

विचार आमतौर पर किसी गवाही को माने जाने और विश्वास के कारण बनते है। उदाहरण के लिए किसी को संदेश मिलता है कि उसका प्रियजन अभी-अभी सड़क दुर्घटना में मारा गया है। वह एकदम दुखी हो जाता है। थोड़ी देर बाद एक और संदेश मिलता है कि बहुत बड़ी चूक हो गई है, पहला संदेश गलत था और उसका प्रियजन जीवित है और ठीक-ठाक है। एकदम से उसके विचारों में एक नाटकीय परिवर्तन आ जाता है। वह आनन्द से भर जाता है। किसी के विचार या भावनाएं, मिली जानकारी या गवाही के आधार पर बनते है। यदि किसी को बुरा संदेश मिल जाए और वह उसे मान लेता है तो वह मायूस हो जाता है, वह संदेश चाहे सही हो या गलत। इसीलिए प्रतिदिन के जीवन में और धार्मिक मामलों में भी भावनाएं या विचार अविश्वसनीय ही होते हैं।

बहुत से लोग धार्मिक गलती करते है क्योंकि वे अपनी भावनाओं के अनुसार चलते है और उनकी भावनाएं ऐसी धार्मिक शिक्षा पर आधारित होती है जो परमेश्वर के वचन के साथ मेल नहीं खाती है। गलत होने पर भी आत्मिक रूप में किसी को लग सकता है कि वह सही है। मसीही बनने से पहले पौलुस एक भक्त फरीसी था। अपने बारे में उसने बताया कि वह "बाप-दादों की व्यवस्था की ठीक रीति पर सिखाया गया और परमेश्वर के लिए.... धुन लगाया था" (प्रेरितों 22:3)। परमेश्वर

के सामने उसने शुद्ध विवेक के साथ जीवन बिताया था (प्रेरितों 23:1)। पौलुस को लगता था कि आत्मिक रूप में वह सुरक्षित है। उसे लगता था कि वह सही है जबकि वह गलत था। यदि पौलुस तय कर लेता कि "भावनाओं से चलना है" तो वह कभी भी यहूदी मत को त्याग कर मसीहियत को न अपनाता।

"विश्वास से चलना" केवल परमेश्वर में विश्वास करने और मसीह के प्रभु होने को मानने से कहीं बढ़कर है। "दृष्टात्मा भी विश्वास रखते और थरथराते है" (याकूब 2:19)। यीशु ने कुछ यहूदियों की बात की, जो "उस पर विश्वास" रखते थे (यूहन्ना 6:20)। परन्तु बाद में उसने इन्हीं यहूदियों को शैतान की संतान बताया (यूहन्ना 8:44), क्योंकि उन्होंने उसकी इच्छा से मेल खाते हुए काम न करके अपने विश्वास को दिखाने से इंकार कर दिया था। यहूदियों के प्रधान अधिकारियों में से कइ मसीह पर विश्वास लाये थे, "....परन्तु फरिसियों के कारण सब के सामने नहीं मानते थे, कहीं ऐसा न हो कि वे आराधनालय में से निकाले जाएं; क्योंकि मनुष्यों की ओर से की गई प्रशंसा उनको परमेश्वर की ओर से प्रशंसा की अपेक्षा अधिक प्रिय लगती थी" (यूहन्ना 12:42, 43)। अग्रिप्पा को मसीह के विषय में कही गई नबियों की बातों पर विश्वास तो था परन्तु वह मसीही नहीं बन पाया (प्रेरितों 26:27, 28)। "इस प्रकार तुमने देख लिया कि मनुष्य केवल विश्वास से ही नहीं, वरन कर्मों से भी धर्मी ठहरता है "(याकूब 2:24)।

विश्वास जो बचाता है, वही है जो आज्ञा मानता है। विश्वास जिसका लाभ है, वही है "जो प्रेम के द्वारा प्रभाव डालता है" (गलातियों 5:6)। परमेश्वर को प्रसन्न करने के लिए "विश्वास को आज्ञा" मानकर दिखाना आवश्यक है (रोमियों 16:26)। स्वर्ग के राज्य में कौन जाएगा? यीशु ने इसका उत्तर दिया, "....वही जो मेरे स्वर्गीय पिता की इच्छा पर चलता है" (मत्ती 7:21)। उद्धार चुनिंदा लोगों के लिए यानी "...सब आज्ञा मानने वालों के लिए" सुरक्षित है (इब्रानियों 5:9)।

इसका अर्थ यह हुआ कि मनुष्य का उद्धार परमेश्वर के अनुग्रह और लहू के द्वारा होता है, जब वह आज्ञाकारी विश्वास में परमेश्वर की इच्छा को मान लेता है। परमेश्वर की इच्छा को सुनकर, उस पर विश्वास लाकर और उसे मानकर मनुष्य को अनुग्रह के द्वारा उद्धार की वास्तविकता का आनन्द प्राप्त होता है। जिससे उसे "अच्छी भावना" का अनुभव होता है। मसीही व्यक्ति अपने उद्धार के "प्रमाण" के रूप में अपनी भावनाओं को नहीं दिखाता है। वह बाइबल में बताई ईश्वरीय सच्चाई और उस सच्चाई को मानने की ओर ध्यान दिलाता है। "तुम सत्य को जानोगे, और सत्य तुम्हें स्वतंत्र करेगा" (यूहन्ना 8:32)। परन्तु परमेश्वर की इच्छा को मानने में विश्वास दिखाने और अनुग्रह से उद्धार का आनन्द पाना निश्चय ही अच्छा लगने का उचित कारण है।

आप विश्वास से चलते हैं या विचार से? याद रखें आपका मन "सब वस्तुओं से अधिक धोखा देने वाला होता है ...." (यिर्मयाह 17:9)। सुलैमान ने इसकी पुष्टि की थी, "जो अपने ऊपर भरोसा रखता है, वह मूर्ख है...." (नीतिवचन 28:26)। परमेश्वर और उसके वचन में भरोसा रखें, न कि मनुष्य की चंचल भावनाओं पर।

मनुष्य क्या है?

पैरी बी. कॉथम

मृत्यु के बाद मनुष्य का क्या होगा? यह एक ऐसा विषय है जिसके ऊपर कुछ भी विचार करते समय इस बात पर ध्यान देना बड़ा ही आवश्यक है कि मनुष्य का आदि तथा स्वभाव क्या है और उसे किस प्रकार रचा गया है। मनुष्य क्या है? वह कहाँ से आया है? "तो फिर मनुष्य क्या है कि तू उसका स्मरण रखे?" (भजन. 8:4)। इसके केवल दो ही संभव उत्तर है: (1) मनुष्य एक पशु मात्र है जिसका विकास अनेक शताब्दियों से परिवर्तित होकर हुआ है, या (2) फिर मनुष्य एक आत्मिक-प्राणी है जिसे परमेश्वर ने रचा है। यदि मनुष्य का विकास पशुओं से हुआ है और वह मात्र भौतिक है, जैसा कि कुछ लोग सोचते हैं, तो जो लोग मर चुके हैं उनके संबंध में सभी प्रश्नों के उत्तर आसानी से दिये जा सकते है- अर्थात् जो मर गए हैं उनका अब कोई अस्तित्व नहीं है; वे मिट गए हैं, और इसी प्रकार वे सब जो मरेंगे वे भी सदा के लिए मिट जाएंगे।

मनुष्य के आदि के संबंध में विकासवाद के सिद्धांत के जिन विचारों को अकसर रखा जाता है वे अप्रमाणित है- और उन्हें प्रमाणित नहीं किया जा सकता। किन्तु, मनुष्य के आदि तथा स्वभाव के सम्बंध में परमेश्वर का वचन हमें कुछ और ही सिखाता है। बाइबल स्पष्टता से बताती है, कि परमेश्वर ने मनुष्य को अपने ही स्वरूप पर बनाया था। "तब परमेश्वर ने मनुष्य को अपने स्वरूप के अनुसार उत्पन्न किया, अपने ही स्वरूप के अनुसार परमेश्वर ने उसको उत्पन्न किया, नर और नारी करके उसने मनुष्यों की सृष्टि की।" (उत्पत्ति 1:27)। इसी बात का एक और भी स्पष्ट विवरण हमें इन शब्दों में मिलता है, "और यहोवा परमेश्वर ने आदम को भूमि की मिट्टी से रचा और उसके नथनों में जीवन का श्वास फूंक दिया; और आदम जीवता प्राणी बन गया।" (उत्पत्ति 2:7)। भजन. 8:5 में हम इस प्रकार पढ़ते हैं: "क्योंकि तू ने उसको परमेश्वर से थोड़ा ही कम बनाया है, और महिमा और प्रताप का मुकुट उसके सिर पर रखा है।" बाइबल के ये शब्द प्रकट करते हैं कि मनुष्य ईश्वरीय रचना है और वह एक दोहरा प्राणी है-एक भौतिक देह तथा वह प्राण जिसे परमेश्वर ने उसके भीतर फूंका था। मनुष्यों तथा पशुओं में एक बहुत बड़ा अन्तर है। मनुष्य को परमेश्वर ने अपने स्वरूप पर बनाया था, परन्तु पशुओं को नहीं। (देखिए लूका 3:38)।

पौलुस के कथनानुसार मनुष्य का सम्पूर्ण स्वभाव देह, आत्मा तथा प्राण है, "शान्ति का परमेश्वर आप ही तुम्हें पूरी रीति से पवित्र करे; और तुम्हारी **आत्मा** और **प्राण** और **देह** हमारे प्रभु यीशु मसीह के आने तक पूरे-पूरे निर्दोष सुरक्षित रहें।" (1 थिस्सलुनीकियों 5:23)। देह मनुष्य का शारीरिक या भौतिक भाग है। आत्मा को प्रायः जीवन या प्राण कहकर सम्बोधित किया गया है। (भजन. 78:50)। अनेकों बार मनुष्य को प्राणी भी कहा गया है (प्रेरितों 2:41; 1 पतरस 3:20), तथा आत्मा और प्राण

शब्दों में कुछ भेद न रखकर उन्हें एक दूसरे के स्थान पर भी उपयोग किया गया है (लूका 23:46; प्रेरितों. 2:27) जैसे कि हम अपने इस अध्ययन में भी देखेंगे-अर्थात् आत्मा या प्राण मनुष्य का अनन्त (अविनाशी) स्वभाव है। पवित्रशास्त्र में तीनों भागों को अलग-अलग सम्बोधित न करके अकसर मनुष्य को देह तथा आत्मा या देह या प्राण कहकर ही सम्बोधित किया गया है, अर्थात् आत्मा तथा प्राण में कुछ भेद नहीं है, वह एक ही है। (देखिए, रोमियों 8:10; 1 कुरिन्थियों 7:34; 5:5; लूका 8:55; प्रेरितों 2:31; उत्पत्ति 35:18; 1 राजा 17:21, 22)। 2 कुरिन्थियों 4:16 में लिखकर पौलुस ने मनुष्य के दोहरे स्वभाव को प्रकट करके "बाहरी मनुष्यत्व" तथा "भीतरी मनुष्यत्व" कहा था। प्राण शरीर के भीतर है।

दानिय्येल ने कहा था, "और मुझ दानिय्येल का मन विकल हो गया।" (मूल में : मेरी आत्मा देह के भीतर घबरा गई)। (दानिय्येल 7:15)। मनुष्य का वास्तविक "मैं" उसका वह अनदेखा प्राण है जो उसकी देह के भीतर है। जकर्याह के कथनानुसार: "यहोवा.... मनुष्य की आत्मा का रचनेवाला है।" (जकर्याह 12:1)। फिर यूं लिखा है, "....मनुष्य में आत्मा तो है ही और सर्वशक्तिमान अपनी आत्मा की सांस से उन्हें समझने की शक्ति देता है।" (अय्यूब 32:8)। और "जो मिट्टी के घरों में रहते हैं।" (अय्यूब 4:19; 14:22)। मनुष्य, इसलिये, देह के भीतर एक आत्मा है, और आत्मा ही वास्तविक मनुष्य है।

बाइबल की शिक्षानुसार, मनुष्य की आत्मा, जो उसे परमेश्वर से प्राप्त हुई है, अपने पिता परमेश्वर के समान अविनाशी है। "परमेश्वर आत्मा है।" (यूहन्ना 4:24)। "हमारे शारीरिक पिता" की तुलना में परमेश्वर को "आत्माओं के पिता" कहा गया है। (इब्रानियों 12:9)। और पौलुस एक जगह कहता है कि हम "परमेश्वर का वंश" हैं। (प्रेरितों. 17:29)। "परमेश्वर आत्मा है" और मनुष्य का आत्मा "परमेश्वर का वंश" है। आत्मा, जो मनुष्य को परमेश्वर से मिला है, मनुष्य का अविनाशी भाग है। यद्यपि अपनी देह के कारण मनुष्य का सम्बंध इस पृथ्वी से है, किन्तु उसका आत्मिक व्यक्तित्व परमेश्वर के समान है। क्योंकि प्रत्येक अपने ही स्वभाव पर उत्पन्न करता है। मनुष्य की आत्मा अविनाशी है, क्योंकि परमेश्वर ने अपनी अविनाशी आत्मा के स्वरूप पर मनुष्य की आत्मा को बनाया है। (1 तीमुथियुस 1:17)। परमेश्वर अनन्त है (भजन. 90:1, 2); वह सारे जीवन का स्रोत है। (यूहन्ना 5:26; 1 तीमुथियुस 6:16; लूका 3:38)। और परमेश्वर के ही समान मनुष्य भी अविनाशी है, क्योंकि उसकी आत्मा की सृष्टि "परमेश्वर के स्वरूप" में हुई है।

परमेश्वर ने "मनुष्यों के मन में अनादि-अनन्त काल का ज्ञान उत्पन्न किया है।" (सभोपदेशक 3:11; नीतिवचन 20:27)। पतरस ने लिखकर कहा था, कि "तुम्हारा छिपा हुआ और गुप्त मनुष्यत्व" सुसज्जित रहे "अविनाशी सजावट से।" (1 पतरस 3:4)। "गुप्त मनुष्यत्व", तथा "भीतरी मनुष्यत्व" (रोमियों 7:22), का तात्पर्य "प्राण" से है; जो वास्तविक मनुष्य, और "अविनाशी" अर्थात् "अमर" है। भजन-संहिता का लेखक कहता है "तुम्हारे प्राण सर्वदा जीवित रहें।" (भजन. 22:26)। केवल देह

मरनहार है, (रोमियों 6:12; 8:11; 1 कुरिन्थियों 4:11), परन्तु पुनरुत्थान के समय वह भी अविनाशी बन जाएगी। (1 कुरिन्थियों 15:4-45; रोमियों 2:7)।

मनुष्य के प्राण का तात्पर्य हवा, अर्थात वायु या सांस से नहीं है, परन्तु वह मनुष्य का वास्तविक व्यक्तित्व, और उसकी अमर आत्मा है। मनुष्य के भीतर परमेश्वर का स्वरूप परमेश्वर की विशेषताओं, अर्थात् समझ तथा सदाचार, इत्यादि के द्वारा विद्यमान है। (याकूब 3:9)। मनुष्य के भीतर उसकी आत्मा मनुष्य का वह भाग है जो मनुष्य की सभी बातों से परिचित है, "मनुष्यों में से कौन किसी मनुष्य की बातें जानता है, केवल मनुष्य की आत्मा जो उस में है?" (1 कुरिन्थियों 2:11; देखिए उत्पत्ति 6:5; अय्यूब 38:25; रोमियों 10:1, 10)। पौलुस परमेश्वर की सेवा अपनी आत्मा से (रोमियों 1:9) तथा अपनी बुद्धि से करता था। (रोमियों 7:25; देखिए पद 22; इफिसियों 4:23)। क्योंकि मनुष्य की आत्मा का सम्बंध, भूमि की मिट्टी से नहीं, परन्तु अनन्त परमेश्वर से है, इसलिये यह सच्चाई आत्मा के अमर होने तथा देह के विनाश के बाद भी उसके बने रहने की पुष्टि करती है।

इस कारण मनुष्य, जिसकी सृष्टि परमेश्वर ने की है, एक आत्मिक प्राणी है, जो मृत्यु के बाद भी वर्तमान और बना रहता है। मनुष्य का बाहरी मनुष्यत्व, जो कि भौतिक है, मरनहार है; परन्तु उसके भीतर आत्मा, जो उसे परमेश्वर से मिली है, वह अमर है।

परमेश्वर की भूमिकाएं दर्शाते नाम

ह्युगो मेकोर्ड

अपने लोगों के जीवनों में प्रभु की भूमिका के कारण पुराने नियम में उसे कई पदनाम दिए गए हैं। इस पाठ में हम उन नामों में से कुछ के बारे में जानेंगे और समझेंगे कि हमें परमेश्वर को कैसे देखना चाहिए।

"न्यायी"

उत्पत्ति 18:25 में अपना पक्ष रखते हुए, इब्राहीम ने परमेश्वर को शोफेट अर्थात "न्यायी" कहकर पुकारा था। इब्राहीम को लगा कि सदोम और अमोरा में किसी धर्मा का वहाँ के दुष्ट लोगों की तरह नाश नहीं होना चाहिए। इसलिए, उसने परमेश्वर के पास इस आधार पर दया करने की बिनती की कि शोफेट अर्थात न्यायी सारी पृथ्वी का सही काम ही करेगा।

इस विशेष घटना में, जो बात एक धर्मी मनुष्य को सही लगी थी, वही बात परमेश्वर की नजरों में भी सही थी। परन्तु कई बार लोग उन बातों के लिए जो उन्हें अन्यायपूर्ण लगी थी, वही बात परमेश्वर की नजरों में भी सही थी। परन्तु कई बार लोग उन बातों के लिए जो उन्हें अन्यायपूर्ण लगती है परमेश्वर को दोषी ठहराते हैं। परमेश्वर के लिए अन्यायी होना असंभव है, क्योंकि उसका स्वभाव ही धर्म हैं क्योंकि उसकी "आंखें ऐसी शुद्ध हैं कि वह बुराई को देख ही नहीं सकता, और उत्पात को देखकर चुप नहीं रह

सकता" (हबक्कूक 1:13); "वह सच्चा ईश्वर है, उसमें कुटिलता नहीं, वह धर्मी और सीधा है" (व्यवस्थाविवरण 32:4); उसके "सिंहासन का मूल धर्म और न्याय है" (भजन संहिता 89:14)।

परमेश्वर के इतने सारे नियमों के सही होने के प्रगटावे (देखिए लैव्यव्यवस्था 19:18; व्यवस्थाविवरण 4:8; 23:24, 25; 24:10-22) से हमें विश्वास हो जाना चाहिए कि वह जो भी निर्णय लेता है, उसका अवश्य ही कोई न कोई कारण होता है। हम विश्वास कर सकते हैं कि उसने शाऊल के सात पुत्रों को बचाने के लिए (2 शमूएल 21:3, 5, 6); कुकर्म से जन्मे हुए अर्थात अमोनियों तथा मोआबियों को निकालने के लिए (व्यवस्थाविवरण 23:2-6); बीमारी तथा तूफान लाकर अन्य जातियों के बच्चों का विनाश करके सही किया था (1 शमूएल 15)। मानवीय तर्क परमेश्वर के दिमाग की बातों को समझने के लिए अपर्याप्त है; इब्राहीम जैसा विश्वास रखने के लिए कई बार केवल एक ही व्यावहारिक समाधान होता है कि सोफेट अर्थात सारी पृथ्वी का न्यायी, ठीक ही करेगा।

परमेश्वर का चरित्र हमें आश्वस्त करता है कि वह प्रत्येक अन्याय का अन्त कर देगा। आमतौर पर, अपनी अथाह बुद्धि से, कई बार वह इस जीवन में सुधार नहीं करता है, हाबील और नाबोत इसके प्रमाण है (देखिए उत्पत्ति 4:8; 1 राजा 21:1-16)। कई बार सुधारों की प्रतीक्षा अगली दुनिया तक की जाती है, जैसे धनी आदमी और लाजर इसकी पुष्टि करती हैं। परन्तु, कई बार परमेश्वर सभी बातों को सुधार देता है। इस कारण, सभोपदेशक 5:8 को याद रखिए, "यदि तू किसी प्रांत में निर्धनों पर अंधेर और न्याय और धर्म को बिगड़ता देखे, तो इससे चकित न होना; क्योंकि एक अधिकारी से बड़ा दूसरा रहता है जिसे इन बातों की सुधि रहती है, और उनसे भी और अधिक बड़े रहते हैं।"

"चरवाहा"

उत्पत्ति 49:24 में ईश्वर की पुन: आश्वस्त करने वाली विशेष परिभाषा रोएह अर्थात "चरवाहा" है। याकूब ने यह आश्वासन देते हुए कि, परमेश्वर अर्थात रोएह अर्थात चरवाहा उसकी सम्भाल करेगा, यूसुफ के मन में एक सुखद विचार डाला था। दाऊद ने भी प्रभु को रोएह यिसराएल अर्थात इस्राएल के चरवाहे के रूप में देखा था जिसने "यूसुफ की अगुआई भेड़ों की" तरह की थी (भजन 80:1)। उसने परमेश्वर के सब लोगों को "उसकी चराई की भेड़ों" के रूप में देखा (भजन 100:3) और अपने आपको उस भेड़ के रूप में जो अपने रोएह अर्थात अपने चरवाहे में व्यक्तिगत रुचि रखती थी (भजन 23)।

यहेजकेल के दिनों में नबी, याजक और राजा जिन्हें प्रभु के प्रतिनिधियों के रूप में इस्राएल के चरवाहे ठहराया गया था, भरोसे के योग्य न रहे थे। "हाय इस्राएल के चरवाहों पर जो अपने-अपने पेट भरते है। क्या चरवाहों को भेड़-बकरियों का पेट न भरना चाहिए?" (यहेजकेल 34:2)। चरवाहों द्वारा उचित चरवाही न किए जाने के कारण झुण्ड "तितर-बितर" हो गया था और "न तो कोई उनकी सुधि लेता था, न कोई उनको ढूंढ़ता था" (यहेजकेल 34:6)। फिर महान रोएह अर्थात स्वर्गीय चरवाहे ने ठान लिया, "देखो, मैं आप ही अपनी भेड़-बकरियों सी सुधि लूंगा, और उन्हें ढूंढ़गा" (यहेजकेल 34:11)।

यह दाऊद के पुत्र यीशु मसीह में पता चलता है कि परमेश्वर ने अपने वचन को कैसे पूरा किया। परमेश्वर ने कहा, "और मैं उन पर ऐसा एक चरवाहा ठहराऊंगा जो उनकी

चरवाही करेगा, वह मेरा दास दाऊद होगा, वही उनको चराएगा, और वही उनका चरवाहा होगा" (यहेजकेल 34:23)। भविष्यवाणी के "दाऊद" अर्थात् यीशु ने परमेश्वर के पिछले चरवाहों की तरह भाड़े का चरवाहा नहीं कहलाना था। अच्छे चरवाहे की तरह, उसने भेड़ों के लिए अपनी जान भी दे देनी थी (यूहन्ना 10:11)। वह मारा गया था (जकर्याह 13:7; मत्ती 26:31), परन्तु परमेश्वर "हमारे प्रभु यीशु को जो भेड़ों का महान रखवाला है सनातन वाचा के लोहू के गुण से मरे हुओं में से जिलाकर ले आया" (इब्रानियों 13:20)। उस वाचा के द्वारा, बेशक हम "भेड़ों की तरह इधर-उधर भटक रहे थे," "पर अब अपने प्राणों के रखवाले और अध्यक्ष के पास फिर आ गए" (1 पतरस 2:25) हैं। हम चाहे यहूदी हो या अन्य जाति वह महान चरवाहा अपने पास आने वाले सब लोगों को बड़े प्रेम से संभालता है जिसका परिणाम यह होता है कि एक झुण्ड और एक ही चरवाहा बन जाता है (यूहन्ना 10:16)।

जैसे पुराने नियम में, परमेश्वर ने मनुष्यों को अपने प्रतिनिधि बनाकर अधीन चरवाहों के रूप में चुना था; वैसे ही, आज कलीसियाओं के प्राचीनों को चरवाहे कहा जाता है (1 पतरस 5:1, 2)। प्राचीनों को परमेश्वर के झुण्ड की रखवाली करने का काम सौंपा जाता है (प्रेरितों 20:28; 1 पतरस 5:1-4)। जैसे पुराने नियम में चरवाहों को महान रोएह के पास हिसाब देना पड़ता था, वैसे ही प्रभु की भेड़ों के पासबान प्रधान चरवाहे को हिसाब देंगे (1 पतरस 5:4)।

एक दिन प्रधान चरवाहा स्वयं प्रकट होगा :

देखो, प्रभु यहोवा सामर्थ दिखाता हुआ आ रहा है,
वह अपने भुजबल से प्रभुता करेगा;
देखो, जो मजदूरी देने की है वह उसके पास है
और जो बदला देने का है वह उसके हाथ में है।
वह चरवाहे की नाई अपने झुण्ड को चराएगा,
वह भेड़ों के बच्चों को अंकवार में लिए रहेगा
और दूध पिलाने वालियों को धीरे-धीरे ले चलेगा (यशायाह (40:10, 11)।

क्रांतिक मसीहियत.... धनी जवान हाकिम से जिस धर्म की मांग की गई (मत्ती 19:16-22)

कॉय रोपर

बदला हुआ जीवन समर्पण का जीवन है..... ।

यदि कोई ऐसा विशेषण है जिसे हम में से अधिकतर लोग अपने ऊपर लागू नहीं करना चाहेंगे वह संभवतया "क्रांतिक" है। धर्म के विषय में क्रांतिक होना सिलवटों वाला सूट, बिखरे हुए बाल, कमीज पर दाग, गंदे जूते पहने कोने में खड़े अपनी बाइबल पर हाथ मार-मार कर चिल्लाते हुए एक बूढ़े व्यक्ति की कल्पना है कि "मन

फिराओ नहीं तो बर्बाद हो जाओगे।" हम ऐसे नहीं बनना चाहते।

परन्तु असल सवाल यह है कि प्रभु हम से क्या चाहता है? क्या प्रभु हम से "क्रांतिक" होना चाहता है?

इस प्रश्न को सामने रखने के लिए, मैं आप को एक सच्चे अनुभव की बात बताता हूं। कई साल तक हमने विदेश में मिशन क्षेत्र में एक मण्डली के साथ काम किया। हमारे उस काम को छोड़ने के लिए कुछ देर बाद, एक लहर जिसमें हमें एक विशेष प्रकार के पूर्ण समर्पण की आवश्यकता होती है कि अमेरिकी प्रचारकों ने उस बिल्डिंग से लगभग चार मील दूर जहाँ वह मण्डली इक्ट्ठा होती थी एक मण्डली आरंभ कर दी। इस लहर के लोगों को क्रांतिक कहा जाता है। चाहे वे कुछ बातें जिन्हें वे सिखाते और करते हैं बाइबल के अनुसार आपत्तिजनक हैं, परन्तु कम से कम कहें तो हर कोई इस बात पर सहमत है कि उनमें आत्माओं को जीतने का बड़ा जनून है। हम उनके इस आदेश से असहमत हो सकते हैं कि पूर्ण समर्पण के लिए क्या आवश्यक है, परन्तु क्या हमें पूर्ण, क्रांतिक समर्पण से सहमत होना चाहिए? इससे भी आवश्यक है कि क्या हम अपने सदस्यों से उतने ही पूर्ण समर्पण को कहने के लिए तैयार नहीं हैं?

यह प्रश्न मेरे मन में तब आया जब वह मण्डली आरंभ हुई थी जो उस कलीसिया से अधिक दूर नहीं थी जिसके साथ हमने काम किया था। जिन लोगों को हमने प्रभु में लाया था हमने उन्हें उनकी जिम्मेदारी बताई थी कि वे संगति करें, चंदा दें, विश्वासी बने रहें और दूसरों को प्रभु में लाएं। काफी हद तक हम सफल रहे। जैसा कि अधिकतर मण्डिलयों में होता है हमारे भाइयों में से कुछ लोग बहुत विश्वासी हैं, कुछ काफी विश्वासी हैं और कुछ जो जरा भी विश्वासी नहीं हैं।

जब नई मण्डली आरंभ हुई थी, तो "हमारे सदस्यों" में से कुछ लोग उस में गए थे। कइयों ने तो वहाँ सदस्यता लेने में दिलचस्पी भी दिखाई थी। परन्तु इसके प्रचारकों ने उन भावी सदस्यों को स्पष्ट कर दिया कि "उनकी मण्डली" के हर सदस्य से रविवार प्रात: की आराधना में उपस्थित होने तथा सप्ताह भर के पारिवारिक बाइबल अध्ययनों में कम से कम दो बार भाग लेने की अपेक्षा की जाती है और हर सदस्य से एक आत्मा को जीतने और किसी को थोड़े समय के बीच ही दूसरों को प्रभु में लाने की उम्मीद की जाती है।

जानते हैं कि फिर क्या हुआ? "हमारे सदस्यों" ने तुरन्त निर्णय लिया कि वे उस में कोई योगदान नहीं देना चाहते और वे "हमारी" मण्डली में लौट आए.... जहाँ वे सप्ताह में केवल एक बार.... या बिल्कुल नहीं आ सकते थे.... जहाँ उन्हें किसी खोए हुए को बचाने के लिए कुछ न करने के बावजूद "अच्छी तरह से" सदस्य माना जा सकता था।

क्या आप कल्पना कर सकते हैं कि हम में से जिन लोगों ने उस मण्डली के साथ काम किया था, उन्हें कैसा लगा? मिली जुली भावनाओं की बात करें। एक ओर तो हम प्रसन्न थे कि "हमारे सदस्य" इस नये समूह में नहीं "खोए", जिसकी शिक्षा

और व्यवहार संदेहास्पद थी परन्तु दूसरी ओर हम चकित थे कि इन सब वर्षों में हमने इन लोगों को क्या सिखाया? क्या हमने उन्हें यह सिखाया कि नीम गर्म होना कोई बड़ी बात नहीं है? कि यदि आप सचमुच में मसीह को समर्पित नहीं है तो चिंता वाली कोई बात नहीं है? कि आप वफादारी से आराधना में आएं या उदारता से दें या न, दूसरों को सिखाएं या न, इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। यदि हमने उन्हें यह नहीं सिखाया कि मसीहियत के लिए आधा मन होना कोई बड़ी बात नहीं है, तो उन्हें कैसे पता चला? क्या हमने उन्हें सिखाया? क्या हमने कोई गलती की कि जिस कलीसिया को आरंभ करने में हमने सहायता की उसे बाल अवस्था में सिखाया और किशोरावस्था में उसकी अगुआई की, और उसमें ऐसे सदस्य होंगे, जिनके लिए "पूर्ण समर्पण" का विचार बाहरी और/धर्म बहिष्कृत होगा?

परन्तु मेरा मानना है कि जो बात उस मण्डली में लागू होती थी वही अन्य हजारों मण्डलियों पर लागू होती है। इस मण्डली पर लागू होती है? मान लें कि एक रविवार की सुबह हमने घोषणा की कि (क) सप्ताह में चार बार उपस्थिति (जब तक बहुत मजबूरी न हो), (ख) उदारता से देना, (ग) शुद्ध नैतिक जीवन और (घ) दूसरों को मसीह में लाने के सच्चे प्रयास की कम से कम ये बातें आवश्यक है। क्योंकि आपकी मांग इस कलीसिया के सदस्य के रूप में नहीं है। कितने लोग कहेंगे, "अलविदा", और कोई दूसरी कलीसिया ढूंढ़ेंगे?

शायद आप सोच रहे हैं, "मैं यही करूंगा, मैं छोड़ दूंगा और छोड़कर सही ठहरूंगा क्योंकि आपको इस प्रकार के नियम बनाने का कोई अधिकार नहीं है।" आप सही हो सकते हैं। परन्तु एक और सवाल है कि मसीह का चेला होने की बुलाहट के लिए कम से कम शर्तों को पूरा करते हुए अपनी पूरी कोशिश किए बिना ऐसे काम करके आपको मसीही कहलाने का अधिकार है? क्या मसीह आप से उसका कट्टर समर्पित होने को कहता है? इस प्रश्न के उत्तर के लिए, आइए मत्ती 19:16-22 में दी गई धनी जीवन हाकिम की कहानी पढ़ते हैं।

इस कहानी से कई सच्चाइयां जानी जा सकती हैं। ये बातें जिनके लिए लोग जाने जाते हैं, उद्धार नहीं देती।

वे बातें जिन पर मनुष्य जीवित रहता है, उद्धार नहीं दिलाती

ऐसी बहुत सी अच्छी बातें हैं जो आप इस व्यक्ति के विषय में कह सकते हैं। (1) वह जवान था (मत्ती 19:22)। (2) वह एक हाकिम था (लूका 18:18)। (3) वह धनवान था (मत्ती 19:22; लूका 18:23)। (4) यदि उसके वचन को मान लेता, और न मानने का कोई कारण नहीं है क्योंकि वह एक भला आदमी था परन्तु फिर भी वह आज्ञाओं को मानना था (मत्ती 19:18-20)। (5) उसकी दिलचस्पी बचाए जाने में थी (मत्ती 19:16)। (6) उसे मालूम था कि अनन्त जीवन पाने की जानकारी के लिये वह लेने कहाँ जा रहा था, उद्धार के कर्त्ता यीशु के पास। (7) उद्धार पाने का ढंग जानने को वह इतना उत्सुक था, मरकुस हमें बताता है कि वह यीशु के पास भागकर गया और उसके आगे घुटने टेक दिए (मरकुस 10:17)। (8)

वह यीशु के व्यवहार तथा व्यक्तिगत के बारे में कुछ जानता था, क्योंकि उसने यीशु के सामने घुटनों के बल होकर उसे "उत्तम गुरू" कहा (मरकुस 10:17)। (9) यीशु ने उससे प्रेम किया (मरकुस 10:21)।

इस सब के बावजूद उसे उद्धार अभी तक नहीं मिला था। वह यीशु से यह पूछने के लिए आया कि अनन्त जीवन पाने के लिए वह क्या करे। यीशु ने यह नहीं कहा: "इसकी चिंता मत कर, तेरे पास तो यह पहले से है।" उसके धन ने उसका उद्धार नहीं किया। यीशु के चेलों सहित इस तथ्य ने यहूदियों को चकित किया होगा (मत्ती 19:25)। उनके लिए उस आदमी के धनवान होने का मतलब यही था कि वह धर्मी है। यह उनकी समझ से बाहर था कि कोई धनवान खोया हुआ हो सकता है। हमें यह समझने की आवश्यकता है कि धनवान होने का अर्थ आवश्यक नहीं कि यह हो कि उस व्यक्ति का उद्धार हो गया है। न उसकी शक्ति या प्रतिष्ठा उसे उद्धार दिला सकी। वह अपने लोगों में एक बड़ा आदमी होगा। परन्तु फिर भी उसका उद्धार नहीं हुआ था। यही बात आप पर भी लागू हो सकती है। न उसकी जवानी ने उसका उद्धार किया। जब कोई जवान व्यक्ति परमेश्वर को प्रसन्न करने का ढंग जानना चाहे तो यह बड़ी बात होती है। परन्तु जवान होना इस बात की गारंटी नहीं है कि आप उसे भा रहे हैं।

न उसकी भलाई ने उसका उद्धार किया। यीशु ने उससे कहा "आज्ञाओं को माना कर।" यीशु ने उन शर्तों में उत्तर क्यों दिया? क्योंकि वह धनवान जवान हाकिम मूसा की व्यवस्था के अधीन रहता था। यीशु के लिए उसका ध्यान इस ओर लगाना न्यायसंगत था कि सबसे पहले उसे उस व्यवस्था को मानने का ध्यान करना चाहिए जिसके अधीन वह रहता था। जवान व्यक्ति ने पूछा, "कौन सी आज्ञाएं?" (मत्ती 19:18)। यीशु ने मूसा की व्यवस्था की आज्ञाओं का एक नमूना दिया जिसे उस आदमी को मानना था। फिर जवान आदमी ने कहा, "हे गुरू, इन सब को मैं लड़कपन से मानता हूँ" (मरकुस 10:20)। हम मान सकते हैं कि मुख्यतया (आवश्यक नहीं कि पूर्ण रूप से), वास्तव में वह इन्हें मानता था। फिर उसने पूछा, "अब मुझ में किस बात की घटी है?" (मत्ती 19:20)। यीशु ने यह उत्तर नहीं दिया कि, "और कुछ करने की आवश्यकता नहीं। तू एक भला व्यक्ति है इसलिए परमेश्वर ने तेरा उद्धार पहले ही कर दिया है।" बल्कि यीशु ने अतिरिक्त निर्देश दिए। उसके लिए अभी भी कुछ करना आवश्यक था, चाहे वह एक भला व्यक्ति है। भला होने ने उसका उद्धार नहीं किया।

हम जीवन में जिन बातों को अपना उद्देश्य बना लेते हैं जैसे धन, शक्ति, प्रसिद्धि, जवानी, भलाई, ये हमारे उद्धार की गारंटी नहीं दे सकते।